'आदमी के लय तलाषते अनूप अषेष के नवगीत'

डॉ0 बीरेन्द्र कुमार त्रिपाठी

ग्राम+पो0–भैंसवार, जिला–सतना

मध्य–प्रदेश

शोधसार–: अनूप अषेष के नवगीतों की मार्मिकता को गहराई से अध्ययन किया जाय तो भारतीयता की वह झलक स्पष्टता के साथ दिखाई देती है जो एक कम्पित आवाज के साथ चारो ओर फैल रही है जिसमें यह आभास होता है कि आम आदमी की क्या मजबूरी है और स्वतंत्र भारत में अभी भी सामान्य आदमी की क्या स्थिति है समाज में एक लाचारी की चादर परिलक्षित होती है पीढी दर पीढी आम आदमी की जो स्थिति शोषण का षिकार होती चली आ रही है उसकी आवाज में आज भी षब्द की बहुत कमी है कि कोई उस आवाज को सुन सके । सहसा विष्वास नहीं होता कि राष्ट्रीय आजादी के इतने सालों के बाद भी देष के सैकडों हजारों लोग बंधुआ है और उनकी औरते गॉव के सबल मगरमच्छों के लिए पीढी दर पीढी मछली की भॉति निरीह षिकार मात्र है । कौन जाने, मेरे महान भारत में इस अंचल की तरह और ऐसे कितनी द्वीप या अंधी गुफाएं है। जहॉ आजादी की रोषनी तो दूर आदमी के जिन्दा रहने की षर्ते बर्बर और पषु कोटि की है ।

संचार माध्यमों से प्रकट होती इस तरह की खबरे जहॉ ओछी राजनीति के लिए दलगत स्वार्थ का कथकंडा होती है, वहॉ आदमी के लिए हैरानी से सुनी जाने वाली अफसोस जनक घटना मात्र । किन्तु एक संवेदनषील रचनाकार ऐसी घटनाओं को संचार माध्यमों के जरिए नहीं अपनी धारदार दृष्टिसे देखता है और आगत की आहट को पहचान कर उसके अपने कला माध्यम के जिरए अभिव्यक्ति देने लगता है –

'आदिवासी देह–से रौंदे हुए/फूल थे जो/अर्चना के /उन्हीं के
सौदे हुए/हम तिलस्मी हाट से/संवेदना/जादू भरी/उत्सवा
होती सुकव्या/घोटुलों में/अधमरी/इस अमानुष अवस्था की/पीठ
के हौदे हुए ।'

कं0. **01–हम अपनी खबरो के भीतर–अनूप अषेष**

ये काव्य पंक्तियॉ हिन्दी कविता की नवगीत धारा में शीर्ष पंक्ति के प्रतिष्ठित हस्ताक्षर अनूप अषेष के सद्यः प्रकाषित काव्य संग्रह 'हम अपनी खबरों के भीतर' की है । सामाजिक न्याय के लिए प्रतिबद्व और

उसकी प्राप्ति के लिए साहित्य को एक सांस्कृतिक रचनात्मक माध्यम मानने वाले अनूप अषेष अपने कैषोर्य से ही समाजवादी युवजन सभा के सक्रिय सदस्य और जेल यात्री रह चुके है । इसलिए यह अकारण नहीं कि उनके इस पॉचवे नवगीत संग्रह में भी मनुष्य और उसका परिवेष, सामाजिक यथार्थ, आम आदमी की जिीविका, उसके सपने उसकी आकांक्षाएॅ, हार–जीत, विडम्बनाएॅ, आधुनिक जीवन की जटिलताएॅ, बहुमुखी चुनौतियॉ और उनसे घिरकर अभिमन्यु सा युद्वरत उनका चरित्र नायक मौजूद है ।

नवगीत में नयी कविता की भॉति कविता, प्रकृति, चिडिया और लडकी आदि उपादनों की वापसी की यदि घोषणाएँ नहीं करनी पडी तो उसका अधिकांष श्रेय अनूप अषेष जैसे नवगीत कवियों को ही जाता है , जिनके रचाव में स्त्री या लडकी की समूह वाचक संज्ञा बनकर नहीं आती, वह अनिवार्यता उपस्थिति रहती है । बेटी, पत्नी, या मॉ के रूप में –

'गोबर पाथे खडी बेठियॉ/हुई उमर से/बडी बेटियॉ/उंगली

पोछें चूडी धोएं/झउवे में/ सपनों का बोएं/ देहरी की हथकडी

बेटियॉ/सानी करती कुऑ रसोई/मन में घास/खुरपियों रोयीं/

बूढे घर की छडी बेठियॉ ।'

कं0कृ02 हम अपनी खबरों के भीतर

भारतीय समाज में औरत की स्थिति से राष्ट्रीय समाज की षिक्षा, समझ, संस्कार, संवेदपना और आधुनिकता के दावों का मूल्यांकन किया जा सकता ाहै । लकडकी की दोयम दर्ज की स्थिति भारतीय मनः संसार के उस दोगलेपन का पर्दाफाष करती है , जिसमें उसे 'यत्र नारस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवता' कहकर महिमा मंडित तो किया गया ाहै किन्तु यथार्थ जगत में उसकी भूमिका टहलनी या क्रीत दासी या एक वस्तु ऐ अधिक नहीं हैं । अन्यथा निम्न मध्यमवर्गीय कृषक या अन्य पेषे से जुडे परिवार में हाड तोड श्रम करती और विवाह योग्य वय प्राप्त करती लडकियों का भविष्य चिन्तायोग्य क्यों होता है, वे देहरी की हथकडी क्यों है अनूप अषेष का कवि उनकी नियति , उनकी अस्मिता के क्षणवाद में वावस्ता और चिन्तातुर है ।

'वर्तन धोती सुबह/कंघी करती षाम/नींद चारपाई में उॅचे/

दुपहर /खुली लगाम/दरवाजे से इसे खींच लूॅ/ हाथ पकड लूॅ/

नदिया है/गौषाला के बाहर वाली/यह छुट्टा भी रंधिया है /

बेना हांके/हुई पेट से/बडे घरों के नाम ।'

वस्तुतः भारतीय औरत सच्चे अर्थो में दलित है, वह चाहे किसी भी जाति किसी भी वर्ग, किसी भी वर्ण, रंग या षैक्षणिक स्तर की हो, वह अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत है ।

मेरे लेखे एक समुन्नत, षिक्षित और संस्कारी राष्ट्रीय समाज की पहचान वहॉ के औरतों और बच्चों के जीवन स्तर और उनके प्रति समाज के दृष्टिकोण से होनी चाहिए और तो और बच्चचों की जीवन स्थितियों का निरापद होना बल्कि समुन्नत होना ही विकासषील सभ्य राष्ट्र की कसौटी होना चाहिए । इस संग्रह की 'वर्तमान है बच्चे' शीर्षक रचना बच्चों की यथार्थ स्थिति और प्रकारान्तर से जनतांत्रिक व्यवस्था के चेहरे को बेनकाब करती है –

'पीठ की लदानों में/वर्तमान है बच्चे/अम्मा के जांगर है/पिता के

खंभारू है/रोटी के आखर है/बोतल की दारू है/कोख की

खदानों में/इम्तिहान है बच्चें/कोटर के झाडू है/सुबह षाम

गली हैं/ दर्द भरी ऑखों में/चोर हैं मवाली हैं/बाल प्रतिष्ठानों

में/चाय पान हैं बच्चें ।'

हम अपनी खबरों के भीतर की काव्य संवेदनाएँ अनूप अषेष के कवि की चिर–परिचत भाव–विचार सरणियॉ है । उनकी काव्य प्रकृति से परिचित लोगों को इस संग्रह की रचनाओं में भी वही काव्य परिवेष, वही चिन्ताएँ, वही लोक भूमि, वही जातीय चेतना, पारिवारिक संघटन के विघटन का रिसाव, गॉव की थकान, पीडा और दर्द तथा दर्द तथा समूची प्रकृति से जीवन्त से बतियाते से रिष्ते, उनसे बिछुडने, उनके निर्गम विनाष के प्रति, एक गंभीर बेदना है जो उनके काव्य की मूल भाव–भूमियॉ है । इसके बावजूद सुखद आष्चर्य का पहलू यह है कि वे अपने कथनों में दुहराव के षिकार नहीं होते, अलबत्ता कुछ भंगिमाएं। एक तानता लिए मिलती है ।

विष्व समाज के लिए प्रकृति लोक का क्षरण चिन्ता का विषय है । चिन्ता भी कुद इस कदर की ज्यों–ज्यों दवा का दर्द बढता गया प्रकृति संरक्षा की जितनी बातें, जितनी संगोष्ठियॉ, जितने बौद्विक सम्मेलन हुए, व्यवस्था जितनी चिंतित देखी गई, प्रकृति का दोाहन उतनी निर्ममता से किया गया, किन्तु उसकी सुरक्षा के लिए कोई कार्ययोजना कभी सामने नहीं लाई गई । सुन्दरलाल बहुगुणा मेधा पाटकर जैसे लोाग सामाजिकों का ध्यान अवष्य खींचते रहे, इनके लिए पर्यावरण, शगल और फैषन का विषय नहीं रहा, बल्कि व्यक्तित्व के किसी के कटने जैसी मार्मिक वेदन रही । इस संग्रह की यह विरल अनुभूति देखें –

'राम करे यह मेरी दुनिया/पकी धान /हो जाए/पुरखों का पेडों

से रिष्ता/कटे हाथ या छाती/दिन की धूप जली यह काया/

प्यास नीम की पाती/कोदब कुटकी में हंसिया का वर्तमान हो जाए ।'

समूचे काव्य फलक में मॉ के औदार्य आदार्य और उसके उत्सर्ग भाव को रेखांकित कर मातृ–ऋण के प्रति कृतज्ञता की काव्य चेष्टाएँ संदियों से होती आई हैं । ऋषि ग्रन्थों में पितृ ऋण को भले उकेरा गया हो कवि–संवेदना का अटूट हिस्सा उतनी षिद्दत से नहीं रहा । किन्तु नवगीत में पिता के अवदान को बार–बार याद किया गया । पिता के प्रति अपना सत्य भाव अर्पित करने में भी नवगीत नयी कविता की अपेक्षा बाजी मार ले गया । और यह संयोगवष भी नहीं हुआ वरन नवगीत की अपनी परिवेष के प्रति चैतन्य भाव की ही परिणति है ।

इस संग्रह में पिता को याद करती हुए कम से कम तीन कविताएँ है –'पिता कंडों की तरह', 'दुख पिता की तरह होता है' और 'गीली सी बुनियाद पिता' । इन रचनाओं से गुजरते हुए यष मालवीय क 'पिता' रस–स्त्रोत की तरह बराबर बने रहते है, यहॉ वे स्ततंत्र इकाई है, अनूप अषेष के पिता घर परिवार की चौखट से बाहर गॉव–वस्ती की काली ऑधी, मर्यादा की देहरी और पुरखों की कोठार की परंपरा और धूप की तपिष से बचाती छाया भी है–

'हर कोने में इनकी दस्तक/डॉट प्यार के पानी है/पुरखों वाले/

इस कोठार में/चूते घर की छानी है/'–

कं0. 03–हम अपनी खबरों के भीतर –अनूप अषेष

पारिवारिक ईकाई का समग्र भाव बोध नवगीत कविता की ही विषिष्टता रही है । आज तो नयी कविता में भी रिष्तों की उपरी ही सही याद आने लगी है, अन्यथा चौथे, पॉचवें, और छठे दषक में भारतीय समाज की अन्तरवर्ती त्रासदी पारिवारिक विघटन को भूलकर नयी कविता विष्व–समाजी हो गई, ठीक वैसे ही जैसे कोई मॉ–वाप की घोर उपेक्षा कर समाज–सेवी कहलाये । भला हो नवगीत धरा का जहॉ परिवार की टूटन पृष्ठ दर पृष्ठ अंकित है, और इस संग्रह में भी –

'एक दिया था एक थी बाती/सबमें था रहता सम्पाती/अपे कुल कछार

/कटे थे, घुटनों घुटनों पानी में /होठों के सूखे बॉटे है/मेडो की/

बॉहे काटे है /दादा भाई हुए भितरहा/दाउ घिसे किसानी में /'

अक्सर कविता संग्रहों में कवि की ओर से कोई वक्तव्य नहीं होता । उनकी रचनाएँ ही बोलती है । तब स्वभावतः वे क्यों बोलें । किन्तु इस संग्रह में अनूप अषेष ने 'नवगीत प्रसंग' में कुछ जरूरी कहा है कि जैसे यह कि नवगीत में गतिषीलता बनी रहे, जीतीय चेतना, स्मृति और संस्कार उद्घाटित होते रहें, छंद और लय बची रहे, बडबोलेपन से बचा जाए, समय–संदर्भो को उसकी जीवन समग्रता में पहचाना जाए, जो वाक् है उन्हें संजीदकी से सुना जाए और जो अव्यक्त है उनकी धडकनों में रमा जाए–

–'ये उपदेष कथन नहीं आम आदमी के एहसास है और समाज से अलहदा न रहने वाले कवि की स्वाभाविक चिंताएँ भी है । ये काव्य चिंताएँ अर्थात मनुष्य की चिंताएँ । इसलिए इस संग्रह में आदमी की लय तलाषते' सदी के छंद है ।'

यह कथन विचारणीय है कि मुक्त छंद की एकरसता और यांत्रिकता से छुटकारा छंद की ओर वापसी से ही मिल सकता है। छंद पर पुर्नदृष्टि करना उन लयों की ओर फिर लौटना है, जिनसे हमारी पुरानी स्कूति चरितार्थ होती हिै ।.....अपनी संस्कृति नई पहचान विकसित करना जिसमें हमारी जातीय स्कृतियों और समकालीन संषयों दोनों को किसी उत्तेजक सन्तुलन और सम्बंध्न में विन्स्त किया जा सके, शायद एक मात्र विकल्प रह गया है ।

सहसा विष्वास नहीं पडता कि छांदिक संरचना में समकालीन संषयों सहित जातीय स्मृति को देखने की यह उत्कंठा समकालीन कविता के मुखर प्रवक्त और मुक्त –छंद के कवि की बात है । यह और बात है कि कथित मुक्त छंद के नाम पर गझ के रचाव और कविता के अजनवी वर्ण्य संसार की भूल–भुलैया से उबा हुआ हिन्दी पाठक के छंद की वापसी और कविता में स्वयं की अस्मिता खोजने के लिए लालायित है । ऐसे महौल में अनेप अषेष का काव्य–संकलन वह मेरे गॉव की हॅसी थी 'हिन्दी रचना संसार में एक आष्वस्ति पूर्ण दायित्व का निर्वाह करता है ।'

अनूप अषेष नवगीतकों की पॉत में एक ऐसा हस्ताक्षर है जिसकी संरचना में समकालीन काव्य परिदृष्य में न सिर्फ एक अलग पहचन बनाई है, बल्कि नवगीत विधा को उसके स्वतंत्र मानकों के साथ प्रतिष्ठापित कराने में समर्थ रचनात्मक पहल की है । स्मरण रखना होगा कि यह पहल विषुद्व काव्यात्मक गुणवत्ता लिए है, आलोचनात्मक लेख, परिचर्चाओं, संवादों, पूर्वाग्रहों, सतही दुराग्रहों या संकीर्ण गुटवाजी के जरिए नहीं है ।

आलोच्य संग्रह 'वह मेरे गॉव की हॅसी थी' आधुनिक मनुष्य की छीजती संवेदनाषीलता का जीवन्त साक्ष्य है । उपभोक्तावादी सम्यता जिसमें मखौटाई छद्म, आकोक्षाओं की आपाधापी, स्वार्थ के क्षणजीवी रिष्ते, पैसा और पद प्राप्ति की अन्तहीन असीम लालसा में विदूषक बना आज का मनुष्य वस्तुतःकितना बौना और दयनीय क्यों न हो, वह आत्ममुग्धता में अहं ब्रहास्मि के झूठे दर्प का षिकार है । उसने विनम्रता, सदाषयता, बडप्पन, नीति, धर्म, भाईचारा, सत्यनिष्ठा, सहिष्णुता और स्वाभिमान जैसे गुणों को तिलांजलि दे दी है ।

'लोग चुनती सीढियों पर चढे है/भीख के कुछ शब्द/नाष्ते की मेज पोषें पर

कढे है /बोतलों से उफनती है /क्रातियॉ /बंद कमरों में /हाथ अपने जेब

में डाले/व्यवस्था के घरों /.....मेरे चेहरे/नए फ्रेमों में मढे है ।'

वैज्ञानिक प्रगति के नये तकनीकी दौर में शहरीकरण और औद्योंगीकरण के ाचाहे जो लाभ मिले हो, किन्तु संयुक्त परिवारों का विघटन और रिष्तों की चूलों का हिलना बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्व में

भारतीय समाज की एक बडी त्रासदी है ं। परिवार के बिखराव और रिष्तों की टूटन ने मनुष्य के अर्न्तमन को हिला दिया । अपनपौ की डाल से बिछडा मानव नैतिकता की चकाचौंध में अधिक समय तक रम न सका । सहिष्णुता और सद्भाव की मजबूत छीजी, अविष्वास और आषंका के कच्चे धागे मोटे होते चले गए–

'सेहुड के कॉटे है द्वारा पर/भाई ने बटवारा चाहा है/बाप तडपता/अपनी

द्वार पर /यही नहीं/वे बैठकें गॉव की हलचल/सूत बुने व्योहर/तिथि–

त्यौहार पान के बीडे/दिन रॅगरेज के तार/मुण्डी हुई धूप में डालें/घर की

ठॉव–कुठॉव ।'

व्रं. 04– वह मेरे गॉव की हंसी थी–अनूप अषेष

ज्ञातव्य है कि जीवन के हर अनुभव में रचनाषीलता नहीं होती । हरके अनुभव को रचना बनाने की व्यग्रता सपाट बयानी का षिकार हो जाती है । मेरे लेख श्रेष्ठलेखन की बुनियादी षर्त जिदंगी के साथ लेखक की गहरी संलग्नता है । जीवन संघर्ष की पेंचीदगियों में जो रचनाकार जितना अन्तर्मुक्त होगा उसमें उतने ही सषक्त कृतिकार होने की संभावनाएं मौजूद होगी । परम्परा बोध, सांस्कृतिक वैचारिक प्रखरता की धार पाकर विरत अनुभवों को स्वर देती है ।–

'सूर्य मुखी होकर भी हम/कजरौटे पारते रहे/इस पहाड –सी/बस्ती

में/कुछ जलते घोसले दिखे/ लोगों के एि हुए/गीले क्षण/ हम अपनी बॉह

में लिखे/छल के ही हाथों में हम /अपने को वारते रहे।'

भारतीय जन का रस सिक्त हृदय, उसकी लुप्त होती संवेदना उसका गंभीर मौन बडबोलेपन, उत्सव का अभिषेकी मन, उत्पाद, उल्लास, उसकी रूढियॉ, संघर्ष, घुटन और जिजीविषा अनूप अषेष की कविता के केंदीय सूत्र है । वे व्यक्ति के मन को परत दर परत उधेडने और विष्लेषित करते हुए उसे बाह्य भौतिक संघर्ष को भी उद्घाटित करना नहीं भूलते । संकलन की रचनाऍ ग्राम्य जीवन का प्रमाणित दसतावेज है । इसका यह अर्थ नहीं कि ग्रामीण जीवन को रू–ब–रू कराकर वे शान्त हो जाती है, बल्कि वे ऑचलिक बोध के माध्यम से अन्ततो गत्वा सम्पूर्ण देष की असली तस्वीर को उजागर करती है । देष के प्रत्येक ॲचल की रूढियॉ, विदुपताएं और उपलब्धियॉ एक–सी है. इसलिए ये रचनाऍ ऑचलिक जिंदगी को तार–तार करती हुई भारतीय जन की सम्पूर्ण इयत्ता को–

'महानगरों में बसे गॉवों समेत–प्रस्तुत करती है –

'चलते चलते सूॅध गई/हवा अकेलापन/दुपहर की चुप्पी/बैठी है

/खाली–खाली मन/नागफनी के कॉटे/पककर/घर में खूब हॅसे/

अथवा

अब नदी की देह पतली हो गई/ एक मुटठी रेत गीली पलक/साथ में लेकर

जिए /हर गॉव /'

नवगीत जैसे अल्पकाय कलेवर में सांस्कृति सॉसों का रचाव का जटिल काम है जिसे इन रचनाओं में सम्पन्न होते देखना एक दुखद अनुभव है एक चित्र देखिए –

'बाबा कितना छोटा घर है/तेरा आषीष/चावल तिल

भर है/ नेह–नदी कितना बह जाएगी/टोले में गॉव में /खबर

है।'

सच पूछिए तो विराट भारतीय संसृति के अंष अंष झलक को प्रस्तुत करते थे ये नवगीत बडा ' कैनवास' रचते है ।

मध्यमवर्गीय जिंदगी की बेबषी और उसके खुरदुरे यथार्थ का जितना वस्तुतथ्य लेख अनूप अषेष के नवगीतों में जितना सहजात में विद्यमान है उतना किसी नवगीत कवि या अन्य कवियों के काव्य में देखने में नहीं मिलता है ।

संदर्भ ग्रंथ–

1–हम अपनी खबरों के भीतर–अनूप अषेष ।
2–हम अपनी खबरो के भीतर–अनूप अषेष ।
3–हम अपनी खबरों के भीतर–अनूप अषेष ।
4–वह मेरे गॉव की हंसी थी –अनूप अषेष ।